International Journal of Applied Research 2019; 5(7): 497-500

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2019; 5(7): 497-500
www.allresearchjournal.com
Received: 20-05-2019
Accepted: 21-06-2019

मीना कुमारी
शोधार्थी, विश्वविद्यालय, हिन्दी–विभाग, ल.ना. मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
मीना कुमारी
शोधार्थी, विश्वविद्यालय, हिन्दी–विभाग, ल.ना. मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

स्त्री–चेतना के संबंध में महादेवी वर्मा का दुःखवाद और रहस्यवादिता

मीना कुमारी

सारांश :
आधुनिक युग के प्रमुख छायावादी कवियों के काव्य में यह रहस्य भावना अत्यधिक उपलब्ध होती है, किन्तु महादेवी के काव्य में विशुद्ध रहस्यवाद का उत्कर्षपूर्ण तीव्रता से दृष्टिगत होता है। कतिपय विचारक भारतीय रहस्यवाद को पाश्चात्य 'मिस्टिज्म' का संस्करण मात्र स्वीकार करते हैं।

प्रस्तावना
"वर्तमान हिन्दी साहित्य में अद्वैत रहस्यवाद की सौन्दर्यमयी व्यंजना होने लगी है, वह साहित्य में रहस्यवाद का स्वाभाविक विकास है। इसमें अपरोध अनुभूति समरसता तथा प्राकृतिक, सौन्दर्य के द्वारा, अहं का हृदय से समन्वय करने का सुन्दर प्रयत्न है। हाँ, विरह भी युग की वेदना के अनुकूल मिलन साधन बनकर इसमें सम्मिलित है। वर्तमान रहस्यवाद की धारा भारत की निजी सम्पत्ति है, इसमें सन्देह नहीं।"[1] आगे अपना मत प्रकट करते हुए प्रसाद का कथन है– ''वेदों, उपनिषदों और आगमों में यह रहस्यमयी आनंद–साधना की परंपरा के ही उल्लेख है।''[2]
स्वयं महादेवी ने 'यामा' की भूमिका में रहस्यवाद की अवधारणा को स्पष्ट किया है– ''क्योंकि मानवीय सम्बन्धों में जब तक अनुराग–जनित आत्मविसर्जन का भाव नहीं घुल जाता, तब तक वे सरस नहीं हो पाते और जब तक यह मधुरता सीमातीत नहीं हो जाती, तब तक हृदय का अभाव दूर नहीं होता। इसी से इस अनुरूपएक मधुरतम व्यक्तित्व का आरोपण कर उसके निकट आत्म निवेदन कर देना इस काव्य का दूसरा सोपान बना, जिसे रहस्यमय रूप के कारण ही रहस्यवाद नाम दिया गया।"[3]
काव्य में परोक्ष तथा अपरोध दो प्रकार की अनुभूतियों की व्यंजना होती है। रहस्यवाद का स्पष्ट सम्बन्ध परोक्षानुभूति से है। रहस्यवाद के अन्तर्गत चार सोपान प्रमुख रूप से सामने आते हैं– 1. जिज्ञासा, 2. परिचय 3. विरह 4. मिलन।
रहस्यानुभूति का प्रथम चरण जिज्ञासा है। प्रारंभ से ही यह चराचर सृष्टि मानव के सहृदय मानस के लिए आश्चर्य और कौतूहल का विषय रही है। इस सृष्टि का जन्म, पालन और संहार करने वाला कौन है, जब यह जिज्ञासा मानस के मन के अंदर उत्पन्न होती है तो मानव इस जगत् के नियन्ता की खोज प्रारम्भ करता है। वह किसी अदृश्य शक्ति का संकेत जगत में व्याप्त देखता है उस अदृश्य नियंता के अद्भुत कौशल को जब कोई भावुक अभिव्यक्त करने का प्रयास करता है तो वह अभिव्यक्ति रहस्यवाद के प्रथम चरण के रूप में परिलक्षित होती है। वेद काल से ही उसे अनूठे शिल्पी के प्रति इस प्रकार की जिज्ञासा प्रवृत्ति की व्यंजना की प्रवृत्ति उपलब्ध होती है जो कालान्तर में कबीर आदि मध्ययुगीन कवियों की वाणी में अत्यधिक स्वाभाविक रूप में प्रकट हुई है।
जिज्ञासा के उपरान्त परिचय की स्थिति होती है जो रहस्यवाद का द्वितीय चरण है। किसी आधार या गुरु के सान्निध्य में आकर ही साधक की उस परम सत्ता का ज्ञान होता है। उत्तरोत्तर ज्ञान कम से साधक इस सत्ता से परिचय प्राप्त करता है। अत्यधिक परिचय के उपरान्त साधक उसे शब्दों तथा वाणी द्वारा साकार करने का प्रयास करता है, किन्तु यह प्रयास अत्यन्त असाध्य और अति जटिल मालूम पड़ता है।
कबीर इसे गूँगे के गुड़ की संज्ञा देते हैं और तुलसी इसे "गिरा अनयन नयन बिनु बानी' बताते हैं। परिचय को इस अभूतपूर्व स्थिति में रहस्यवादी साधक प्रकृति के प्रत्येक कण के (जड़ और चेतन) सौन्दर्य में अखिल विश्व नियन्ता के स्वरूप के अनुपम सौन्दर्य का आभास करता है और उसके अतुलनीय सौन्दर्य में मन मुदित होने लगता है।
परिचय के उपरान्त ही साधक विरह–भाव का आभास करता है उस अदृश्य सत्ता के अभाव की टीस विरह की स्थिति में पहुँचा देती है, जो रहस्यवाद का तृतीय चरण कहलाता है।

विरह मानस में उपजी पीड़ा का पर्याय है। मानसगत वेदना का साहित्यिक रूप विरह कहा जाता है। विरह प्रेम का मापक है क्योंकि प्रेम जितना तीव्र होगा उतना ही अधिक प्रबल विरह–भाव स्वतः होता है। वेदना सुख की प्रतीति के अवसाद को कम करके उसे सरस बनाने में सहयोग देती है। मनोविज्ञान के अनुसार, वेदना, पीड़ा, टीस की वृत्ति मानव–मन की आकांक्षित वृत्ति है। स्वभावतः पीड़ा से जन्म होने के कारण मानव मन को पीड़ा से अत्यन्त लगाव होता है।

रहस्यवाद का अन्तिम चरण मिलन है। मिलन कवि, साधक अथवा भावुक प्रेमी के निमित्त चरम उत्कर्ष की स्थिति है। लौकिक एवं अलौकिक मिलन में पर्याप्त भिन्नता है। लौकिक मिलन में विछोह की आशंका प्रतिपल बनी रहती है, किन्तु अलौकिक या अपार्थिव मिलन सार्वकालिक होता है, जिसमें विछोह की शंका तिरोहित हो जाती है। अलौकिक मिलन की स्थिति का आभास मात्र ही सम्पूर्ण शरीर में दिव्यता की आभा के प्रति अनुराग ही परिलक्षित होने लगता है।

प्रकारान्तर से यह माना जा सकता है कि रहस्यवाद उपर्युक्त चारों चरणों (जिज्ञासा, परिचय, विरह, मिलन) का समन्वित स्वरूप है। महादेवी के काव्य में रहस्यवाद की पूर्ण प्रतिष्ठा उपलब्ध होती है। असीम सत्ता के प्रति जिज्ञासा, उससे परिचय की ललक, तदुपरान्त उसके अनुराग पाश में बँधकर उसके अभाव में विरह का अनुभव तथा उससे चिर मिलन की आकांक्षा महादेवी के काव्य में सर्वत्र व्यंजित हुई है। रहस्यवाद का अवधारणा और स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए महादेवी ने खुलकर विचार प्रकट कर उसे स्पष्ट करने का प्रयास किया है। अपने गीतों में रहस्यानुभूति की उपस्थिति पर वे कहती हैं– ''रहस्य– गीता का मूलाधार भी आत्मानुभूत अखण्ड चेतना है, पर वह साधक की मिलन–विरह की मार्मिक अनुभूतियों में इस प्रकार घुल–मिल सका कि उसकी लौकिक स्थिति भी लोक–सामान्य हो गयी।''[4]

एक अन्यत्र स्थल पर वे अपनी धारणा प्रस्तुत करती हुई कहती हैं– ''आज गीत में हम जिसे रहस्यवाद के रूप में ग्रहण कर रहे हैं। वह इन सबकी विशेषताओं से युक्त होने पर भी उन सबसे भिन्न है। उसने पर विद्या की अपार्थिवता ली, वेदान्त के अद्वैत की छायामात्र ग्रहण की, लौकिक प्रेम से तीव्रता उधार ली और इन सबको के सांकेतिक दाम्पत्य–भाव–सूत्र में बाँधकर एकत्र कर निराले स्नेह सम्बन्ध की सृष्टि कर डाली, जो मनुष्य के हृदय को पूर्ण आलम्बन दे सका, उसे पार्थिव प्रेम से ऊपर उठा सका तथा मस्तिष्क को हृदय को मस्तिष्कमय बना सका।''[5]

महादेवी ने यद्यपि प्राचीन भारतीय रहस्यवादी परम्परा के अनुसार ही अपनी रहस्यानुभूति का अंकन किया है, किन्तु समयानुकूल आधुनिकता का समावेश उनकी रहस्याभिव्यक्ति को और अधिक पुष्ट स्वरूप प्रदान करने में सक्षम रहा है। आत्मा और प्राचीन दोनों ही परम्पराओं में एक–सी उपलब्ध होती है। इस दृष्टि से महादेवी की रहस्यानुभूति कहीं–कहीं कबीर के निकट पहुँची हुई मालूम पड़ती है।

महादेवी के काव्य में रहस्यवाद का विवेचन करने के लिए सर्वप्रथम उनकी प्रणयानुभूति का अध्ययन अपेक्षित है। काव्य में अभिव्यंजित होने वाला प्रणय दो प्रकार का होता है–लौकिक तथा पारलौकिक। महादेवी के काव्य में मूलतः अशरीरी प्रेम की व्यंजना परिलक्षित होती है। जब साधक प्रणय के आधार पर भावुकतापूर्ण भावना से इन्द्रिय जगत् के परे हो जाता है तो मैं मेरा आदि की भावना का लोप हो जाता है। केवल एकमात्र उसी जगत् नियन्ता की छवि का अभ्यास चराचर जगत् की प्रत्येक वस्तु में परिलक्षित होने लगता है। अशरीरी प्रेम में श्रृंगार की भावना को आध्यात्मिकता के आचरण में गुम्फित कर प्रस्तुत किया जाता है।

''मधु में भीने फूल प्राण में भर मदिरा सी चाह,
देख रहे अविराम तुम्हारे हिम–अधरों की राह''[6]

इन पंक्तियों में उसके आने की किया सगुण के समान प्रदर्शित की गई है, किन्तु वह निराकार है। इसी वैशिष्ट्य के कारण उनकी अभिव्यक्ति अनूठी हो गई है। महादेवी ने उस अलौकिक नियन्ता की अनुभूति के अंकन में लौकिक गुणों के समावेश को आरोपित कर अपनी अभिव्यक्ति को अनुपम चारुता से युक्त कर दिया है। लौकिकता के संस्पर्श से उनकी अलौकिक प्रिय के प्रति अभिव्यक्ति तथा आत्म–निवेदन एक अनूठी दिव्यता से अभिमंडित हो गया है जो उनके काव्य को सर्वोत्कृष्ट बनाने में पूर्ण सहायक सिद्ध हुआ है।

यत्र–तत्र मानव–आत्मा के साक्षात्कार का अंकन भी उनके काव्य में उपलब्ध होता है यथा–

''मैं तमुमसे हूँ एक, एक हैं
जैसे रश्मि–प्रकाश,
मैं तुमसे भिन्न, भिन्न ज्यों
धन से तडित्–विलास''[7]

मूलतः महादेवी के काव्य में आत्मा का चित्रण नारी–रूप में तथा उस परम सत्ता का चरित्र पुरुष रूप में मिलता है। महादेवी ने स्वकीया, परकीया आदि नायिका भेदों से स्वतन्त्र होकर स्वयं को मात्र उसकी अधीरा प्रेयसी के रूप में प्रस्तुत किया है, क्योंकि हृदयगत अन्यतम रागात्मक सम्बन्धों में प्रिया का रूप ही सर्वाधिक मधुर है। कहीं विशुद्ध रूप में दीपक को जीवात्मा का प्रतीक मानकर उस पर मानवीय गुणों का आरोप कर उन्होंने रहस्य–भाव की मधुरतम अभिव्यक्ति प्रस्तुत की है। महादेवी के काव्य में परमात्मा के विरह में व्यथित आत्मा की सुन्दर अभिव्यक्ति व्यंजित हुई है। सम्पूर्ण समष्टिगत सौन्दर्य महादेवी को उसी चिर सुन्दर आराध्य प्रिय के अंश मात्र का प्रतिबिम्ब जान पड़ता है यही कारण है कि साधिका का हृदय अपने आराध्य की झलक पाने को लालायित हो उठा है।

डॉ० सुषमा पाल का अभिमत उनके काव्य में रहस्यवाद के सम्बन्ध में पूर्णतः समीचीन है– ''वस्तुतः उनके ब्रह्म–प्रेम के सहवर्ती रूप ने एक ओर उनमें मिलन की तीव्र आकांक्षा जागृत की, दूसरी ओर निरन्तर विरह में रहकर जन–कल्याण की लालसा को जीवित रखा इसी कारण रहस्यवाद अपेक्षाकृत अधिक रहस्यात्मक हो उठा है।''[8]

महादेवी की रहस्य का विस्तृत विवेचन कतिपय निम्न शीर्षकों के आलोक में किया जा सकता है।

1. विस्मय कौतूहल एवं जिज्ञासा– निखिल विश्व के उस अद्भुत निर्माता और नियन्ता के देखने की जिज्ञासा उत्पन्न होना पूर्णतः स्वाभाविक है उपनिषदों की वैदिक ऋचाओं में भी भावना तीव्रता से व्यंजित हुई है।

''अं केनेषितुं पतित प्रेषितं मनः
केन प्राणः प्रथमः मुक्तः
केनेषितां वाचमियाँ वदन्ति
चक्षः श्रोतं कउ देवी पुनक्ति।''[9]

महादेवी को सम्पूर्ण सृष्टि में किसी दिव्य शक्ति के प्रभुत्व का आभास होता है। उनके मन में उस अद्भुत सत्ता के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न हो जाती है। उस अनूठे शिल्पी के शिल्प–वैभव से विस्मित महादेवी के हृदय में उसे देखने का कौतूहल जाग्रत हो जाता है और जिज्ञासु साधिका कौतूहल के वशीभूत हो कह उठती है–

(अ) ''सजल श्यामल मंथर मूक सा
तरल अश्रु–विनिर्मित गात ले,
नित धिरूँ झर झर मिटूँ प्रिय!

घन बनूँ वर दो मुझे प्रिय!(10)

(ब) **"कौन मेरी कसक में नित,**
मधुरता भरता अलक्षित
कौन प्यासे लोचनों में,
घुमड़ घिर झरता अपरिचित?"(11)

(स) **"हुआ त्यों सूनेपन का भान,**
प्रथम किसके उर में अम्लान?
और किस शिल्पी ने अनजान,
विश्वप्रतिमा कर दी निर्माण?"(12)

उपर्युक्त सभी उद्धरणों में अलौकिक प्रिय के प्रति जिज्ञासा अत्यन्त सुमधुर ढंग से व्यंजित हुई है।

2. परम् शक्ति के अस्तित्त्व की झलक– रहस्यवादी कवि को सर्वत्र उस परम सत्ता के अस्तित्त्व का आभास होता है और वह उस दिव्य सौन्दर्य के दर्शन को लालायित हो उठता है। महादेवी भी उस अनन्य शक्ति की मात्र झलक पाने को आकुल दिखाई पड़ती हैं। महादेवी ने अपनी इस अनुभूति को प्रतीकात्मकता के माध्यम से व्यंजित किया है। प्रकृति के अतुलित अनन्त व्यापार में उन्हें किसी विराट् का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है। यत्र–तत्र सर्वत्र व्याप्त अपने चिर सुन्दर की छवि उन्हें आमंत्रण देती प्रतीत होती है। वे कण–कण में प्रतिबिम्बित प्रिय के आलोक का आभास कर परिचय हेतु अत्यन्त व्याकुल हो उठती है। दृष्टव्य हैं उपर्युक्त भाव की व्यंजना करने वाली कतिपय पंक्तियाँ–

"क्षण गूँजे औ' यह कण गावें
जब वे इस पथ उन्मन आवें,
उनके हित मिट–मिट कर लिखती,
मैं एक अमिट सन्देश रही!"(13)

तथा–

"आँसू का तन, विद्युत् का मन,
प्राणों में वरदानों का प्रण,
धीर पदों से छोड़ भले घर,
दुख–पाथेय संभाले!"(14)

स्पष्ट है कि महादेवी को सम्पूर्ण सृष्टि में अपने अलौकिक प्रिय की मधुरतम छवि ही दिखाई पड़ती है।

3. परम प्रिय के अतुलित सौन्दर्य की कल्पना– महादेवी ने अपने परमप्रिय के अनूठे सौन्दर्य की कल्पना को प्रकृति के उपकरणों के माध्यम से साकार किया है। सम्पूर्ण प्रकृति उन्हें प्रिय के अद्भुत सौन्दर्य का बोध कराने लगती है–

"लोचना में क्या मदिर नव?
देख जिसको नीड़ की सुधि फूट निकली बन मधुर रव!
झूमते चितवन गुलाबी–
में चले गृह खग हठीले!"(15)

तथा–

"चितवन तम–श्याम रंग
इन्द्रधनुष भृकुटि भंग
विद्युत् का अंगराज
दीपित मृदु अंग–अंग,
उड़त नभ में अछोर तेरा नव–नील चीर!"(16)

अलौकिक प्रिय के अस्तित्त्व का आभास कराने के कारण ही प्रकृति पर मानवीयता का अरोप किया गया है। चूँकि रहस्यवाद में आलम्बन निराकार और अगोचर होता है इसलिए उसके अपरूप सौन्दर्य की कल्पना को प्रकृति के नाना उपकरणों के माध्यम से व्यंजित करने का प्रयास किया गया है। दिव्यतिदिव्य परम सुन्दर की रूप शोभा का अंकन प्रकृति के सहयोग से महादेवी के काव्य को लालित्य प्रदान करने में सफल रहा है।

4. दृढ़ विश्वास– महादेवी को परम सत्ता के अस्तित्त्व में पूर्ण निष्ठा है। उनका विश्वास कौतूहल के साथ–साथ और अधिक दृढ़ होता जाता है।
दृष्टव्य है उनकी निरन्तर दृढ़ होती आस्था की परिचायक कतिपय पंक्तियाँ–

"अश्रु घन के बन रहे स्मित
सुप्त वसुधा के अधर पर,
कंज में साकार होते
वीचियों के स्वप्न सुंदर;"(17)

5. मिलन–कामना व मिलन–संकेत– प्रियतम से चिर मिलन की अभिलाषा प्रेयसी के मन को सदैव गुदगुदाती रहती है और यही रागात्मक सम्बन्ध की विशिष्टता भी है। महादेवी के काव्य में मिलन की कामना से युक्त भावनाएँ गीतों में सर्वत्र मुखरित हुई हैं। चिर मिलन की कामना प्रणयातिरेक तथा तीव्र प्रेमानुभूति की स्थिति से उत्पन्न होती है। महादेवी के गीतों में इसी अनुराग की अनुभूति तीव्रता से व्यंजित हुई है। आद्यान्त यही मधुरानुभूति विविध कल्पनाओं के माध्यम से महादेवी के काव्य को प्रेम के लालित्य से रंजित करने में सहायक सिद्ध हुई है। यथा–

"साँसें कहतीं अमर कहानी,
पल–पल बनता अमिट निशानी,
प्रिय! मैं लेती बाँध मुक्ति
सौ सौ, लघुपत बन्धन अपने में।
तुम्हें बाँध पाती सपने में!"(18)
"तम में हो चल छाया का क्षय,
सीमित की असीम में चिर लय,
एक हार में हो शत–शत जय,
सजनि! विश्व का कण कण मुझको
आज कहेगा चिर सुहागिनी!"(19)

मिलन के उछाह का यह अनवरत प्रवाह महादेवी के मानस में प्रसुप्त अतीत की मधुर स्मृतियों को मानों कोंच–कोंचकर जगा देता है। महादेवी का मन स्वप्न में ही प्रिय के संसर्ग को तड़प उठता है। उसके मन में यह कामना घर कर जाती है कि काश उसे अपने प्रिय का साथ केवल क्षण मात्र को स्वप्न में भी यदि मिले सके तो उसके जीवन का अभीष्ट पूर्ण हो जाए।

निष्कर्ष :

तीव्र प्रेमानुभूति की स्थिति में रहस्यवादी कवि को मिलन–सुख का अनुभव होने लगता है। कवि जब आत्मभाव का विसर्जन कर स्वयं को उस परम् आत्मा में लीन कर देता है तो चिर मिलन की अवस्था स्वतः ही उपस्थित हो जाती है। रहस्यवादी कवि उस परमशक्ति का साक्षात्कार प्रत्यक्ष रूप में नहीं कर पाता तो स्वप्न, स्मृति आदि के माध्यम से उससे साक्षात्कार कर स्वयं को अन्य समझता है। महादेवी के काव्य में सर्वत्र यही भाव दृष्टिगत होता है। वे प्रिय का दर्शन जब प्रत्यक्ष रूप में नहीं कर पाती तो वह स्वप्न में अपनी कल्पना के माध्यम से अपने प्रिय का दर्शन कर अपनी आकुलता का शमन करती है। प्रिय से स्वपन में साक्षात्कार महादेवी की अभिव्यक्ति की अनूठी विशेषता है।

संदर्भ–संकेत :

1. काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध : जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ– 85
2. वही : पृष्ठ– 68

3. सांध्यगीत : महादेवी वर्मा, पृष्ठ– 11–12
4. दीपशिखा : महादेवी वर्मा, पृष्ठ– 36
5. सांध्यगीत : महादेवी वर्मा, पृष्ठ– 12
6. यामा : महादेवी वर्मा, पृष्ठ– 49
7. वही, पृष्ठ– 41
8. छायावाद की दार्शनिक पृष्ठभूमि : डॉ0 सुषमा पाल, पृष्ठ– 319
9. केठोपनिषद :
10. नीरज : महादेवी वर्मा, पृष्ठ– 31
11. नीरजा : महादेवी वर्मा– पृष्ठ– 1
12. सन्धिनी : महादेवी वर्मा– पृष्ठ– 39
13. दीपशिखा : महादेवी वर्मा– पृष्ठ– 89
14. वही, : पृष्ठ– 56
15. सन्धिनी : पृष्ठ– 86
16. सन्धिनी : पृष्ठ– 123
17. यामा : पृष्ठ– 95
18. नीरजा : पृष्ठ– 6
19. वही : पृष्ठ– 33